www.thearyasamaj.org

आर.एन.आई. रजि० नं० HRHIN/2003/10425
डाक पंजीकरण संख्या : P/RTK/10/2011-13

सृष्टि संवत् 1960853114
विक्रम संवत् 2070
दयानन्दाब्द 190

॥ ओ३म् ॥

# आर्य प्रतिनिधि

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा का साप्ताहिक मुखपत्र
E-mail : aryapsharyana@gmail.com दूरभाष : 01262-216222 सम्पादक : सत्यवीर शास्त्री
विदेश में वार्षिक शुल्क : 75 डॉलर विदेश में आजीवन शुल्क : 300 डॉलर
वर्ष : 10 अंक : 22 रोहतक, 7 नवम्बर, 2013 वार्षिक शुल्क : 150/- आजीवन 1500/-

# ईश्वर की आज्ञापालन के बिना सुख कहाँ?

❑ लालचन्द चौहान, # 591/12, पंचकूला, मो. 09814881501

यह सुनिश्चित करके जानें कि कोई भी व्यक्ति मंगलमय सबकी पालना करने वाले ईश्वर की आज्ञापालन के बिना संसार वा परलोक में सुखों को प्राप्त होने में समर्थ नहीं हो सकता। जो लोग ईश्वर के स्थान पर अन्य की उपासना करते हैं, वे ईश्वर का अनादर करते हैं और ईश्वर का अनादर करने वाला कभी सुख नहीं पाता, वह किसी न किसी रूप में दु:खों को भोगता रहता है, चाहे वह शारीरिक रोग के कारण हो या मानसिक विकृतियों के कारण से हो। ईश्वर आज्ञा का उल्लंघन करने वाला चाहे वह अरबों-पति क्यों न हो सुख जिसके कहते हैं, उसको नहीं पा सकता।

**त्र्यायुषं जमदग्नेः कश्यपस्य त्र्यायुषं।**
**यद्देवेषु त्र्यायुषं तन्नोऽस्तु त्र्यायुषम्॥**
(यजु० 3/62)

**भावार्थ**—चक्षुः (नेत्र) सब इन्द्रियों में और परमेश्वर सब रचना करनेहारों में उत्तम है, ऐसा सब मनुष्यों को समझना चाहिए और (त्र्यायुष) इस पदवी की चार बार आवृत्ति होने से तीन सौ वर्ष से अधिक चार सौ वर्ष पर्यन्त भी आयु का ग्रहण किया गया है अर्थात् चार सौ वर्ष से अधिक आयु ग्रहण की जा सकती है, इसकी प्राप्ति के लिए परमेश्वर से प्रार्थना करके अपना पुरुषार्थ करना भी ईश्वर आज्ञानुसार उचित है सो प्रार्थना इस प्रकार करनी चाहिये—हे ईश्वर! आपकी कृपा से जैसे विद्वान् लोग, आप्त पुरुष विद्या धर्म और परोपकार के अनुष्ठान से आनन्दपूर्वक तीन सौ वर्ष पर्यन्त आयु को भोगते हैं, वैसे तीन प्रकार के ताप से, शरीर, मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार रूप अन्तःकरण इन्द्रिय और प्राण आदि को सुख करने वाले विद्या विज्ञान सहित आयु को हम लोग प्राप्त होकर तीन सौ वर्ष वा चार सौ वर्ष पर्यन्त सुखपूर्वक जीवे।

सुखपूर्वक जीने के लिए ईश्वर आज्ञा का पालन करना अति आवश्यक है। ईश्वर आज्ञा क्या है?

ईश्वर आज्ञा देता है कि विद्वान् पुरुष और स्त्रियों को चाहिये कि विद्यार्थी, कुमार व कुमारी को विद्या देने के लिये गर्भ के समान धारण करें। जैसे क्रम-क्रम से गर्भ में बीच देह बढ़ता है, वैसे अध्यापक लोगों को चाहिये कि अच्छी-अच्छी विद्या से ब्रह्मचारी, कुमार व कुमारी को श्रेष्ठ विद्या में वृद्धियुक्त करें तथा (उनका) पालन करें वे विद्या के योग से धर्मात्मा और पुरुषार्थयुक्त होकर सदा सुखी रहें, यह अनुष्ठान सदा करना चाहिये। ईश्वर ने संसार को शुभ गुण और सत्कार प्रकाश के लिए रचा है। जैसे ईश्वर ने वसन्त, ग्रीष्म, वर्षा, शरद्, हेमन्त और शिशिर ये छः ऋतु, रस, शोष, जीव, अन्न, कठिनता और क्रोध के उत्पन्न करने वाले होते हैं, वैसे ही पितर भी अनेक विद्याओं के उपदेश से मनुष्यों को सुख निरन्तर देते हैं, इससे मनुष्यों को चाहिये कि उक्त पितरों को उत्तम-उत्तम पदार्थों से सन्तुष्ट करके उनसे विद्या के उपदेश को निरन्तर ग्रहण करें। कहावत है अविद्यस्य कुतः सुखम्। बिना विद्या के सुख कहाँ? और बिना ईश्वर आज्ञा पालन के विद्या कहाँ?

जो मनुष्य ईश्वर की सृष्टि में अग्नि और वायु के गुणों को जानकर कार्यों में संप्रयुक्त करके अपने-अपने कार्यों को सिद्ध करते हैं वे सब राज्य आदि धनों को प्राप्त होकर आनन्द करते हैं इनसे भिन्न मनुष्य नहीं। जो ईश्वर भीतर-बाहर सब जगह व्याप्त होकर सब व्यवहारों को सुनता वा जानता हुआ वर्तमान है। इस कारण उससे भय मानकर अधर्म करने की इच्छा कभी नहीं करनी चाहिये। ईश्वर सबको वेद द्वारा अच्छी प्रकार पुरुषार्थ करने, विद्या के विस्तार करने, धर्म के अनुसार प्रजा पालने, शत्रुओं की निवृत्ति, शुभ कर्म करने, यज्ञ क्रिया के फल को जानने, धर्म के अनुष्ठान में निर्भयता से स्थिर होने, सबके साथ मित्रता से वर्तने, वेद-विद्या का पठन-पाठन, धर्माचरणों में वर्तने, राष्ट्र की सुरक्षा, मातृभूमि से प्रेम, विद्वानों व माता-पिता की सेवा-सत्कार, गृहस्थ का अच्छी प्रकार पालन, जगत् जननी का सत्कार, असहायों की सहायता करना, ईश्वर में पूर्ण आस्था, सब प्राणियों को समान समझना, किसी को कष्ट वा हानि न पहुंचाने का मन में कभी विचार तक उत्पन्न न होने देना आदि-आदि कार्य करने का मानव को ईश्वर का आदेश है। उक्त की पालना करना ही ईश्वर आज्ञा का पालन है। जो मनुष्य ईश्वर आज्ञा का पालन करते हैं वे ईश्वरकृपा से सब प्रकार के आनन्द सुख का भोग करते हैं। यह बात भी जानने योग्य है कि ईश्वर किसी के पाप कभी क्षमा नहीं करता, सब पाप-पुण्य कर्मों का सबको यथावत् फल समय आने पर अवश्य देता है, ईश्वर की अटल न्याय व्यवस्था है, उसे कोई भी शक्ति बाधित नहीं कर सकती। कई कहते हैं कि 'ईश्वर के यहां देर है परन्तु अन्धेर नहीं।' ईश्वर के घर एक पल की भी किसी कार्य में देरी नहीं होती। क्या कभी आपने सूर्य उदय होने में एक क्षण की देरी देखी है? ईश्वर समय आने पर फल देता है, जैसे आम का वृक्ष लगाया उसी समय फल नहीं देता, समय आने पर फल देता है। बोई गई फसल उसी समय फल नहीं देती निर्धारित समय पर ही पकती है अर्थात् फल देती है। यह सुनिश्चित करके जान लें कि हर अच्छे-बुरे कर्म का फल ईश्वर देता है, कोई पाप क्षमा नहीं होते, इसीलिये ईश्वर ने सबको धर्माचरण का उपदेश किया है। कोई पालन करे या न करे, इसके लिये ईश्वर किसी को बाध्य नहीं करता, क्योंकि जीव को ईश्वर ने कर्म करने की स्वतन्त्रता प्रदान की है, यदि ईश्वर मनुष्य किसी कर्म के लिए बाध्य करता तो वह कर्म तो ईश्वर का हुआ, उसका फल उस मनुष्य को कैसे मिल सकता है? हां, ईश्वर जब मनुष्य किसी पाप कर्म का मन में विचार लाता है उस समय उसकी आत्मा में जो भय कम्पन आदि होता है वह ईश्वर का उस पाप कर्म को न करने का संकेत होता है, परन्तु मनुष्य ईश्वर के उस संकेत की ओर ध्यान न देकर दुष्कर्म कर बैठता है और जब दुष्कर्मों का ईश्वर फल देता है फिर ईश्वर को ही दोषी ठहराते हैं, कईयों को कहते सुना है कि हमने तेरा क्या बिगाड़ा था, जो तू हमारे साथ ऐसा कर रहा है? कई कहते हैं मालूम नहीं ईश्वर हमसे किस जन्म का वैर निकाल रहा है? यह सब अज्ञानता की बातें अज्ञ नी लोग करते हैं, जो ईश्वर के सत्यस्वरूप, गुण, कर्म और स्वभाव से अनभिज्ञ हैं।

जब मनुष्य परमात्मा को जानता है तब समीपस्थ और जब नहीं जानता वह दूरस्थ है, ऐसा निश्चय करके जानना चाहिये। कई कहते हैं दिखाई तो ईश्वर देता नहीं, फिर कैसे यकीन करें कि ईश्वर है। क्या वायु दिखाई देता है, परन्तु जब शरीर को छूता है तो

शेष पृष्ठ 7 पर....

www.thearyasamaj.org



स्वास्थ्य चर्चा

# आयुर्वेद, अथर्ववेद का उपवेद है या ऋग्वेद का

❑ स्वामी ब्रह्मानन्द सरस्वती, मो० : 9416133594

मोनियर विलियम्स ने अपने संस्कृत अंग्रेजी शब्दकोष में लिखा है—'Ayurveda considered as Supplement to Atharveda'. परन्तु उपवेद का अर्थ करते हुए उसने लिखा है कि 'आयुर्वेद ऋग्वेद का उपवेद है।' साथ ही यह भी लिख दिया है—'This is to according to चरणव्यूह है। 'but according to Sushurta, it belong to Atharveda.' अथर्ववेद के गोपथ ब्राह्मण में अथर्ववेद के पांच उपवेद कहे हैं—

**पञ्च वेदान् निरभिमीत सर्पवेद पिशाचवेदमसुर-**
**वेदमितिहासवेदं पुराणवेदञ्चेति।** (गो० 1/10)

इनमें न आयुर्वेद का उल्लेख है न अथर्ववेद का। प्राचीन ग्रन्थ 'चरणव्यूह' में आयुर्वेद को ऋग्वेद का उपवेद माना है। कई एक ऋषियों का भी यही मत है। प्रसिद्ध कोषाकार आप्टे ने भी ऐसा ही माना है। ऐसा प्रतीत होता है कि ग्रन्थकार ऐसा समझते थे कि अथर्ववेद की अपेक्षा ऋग्वेद में आयुर्वेद का विषय अधिक है। उनके भाष्य में भी सोम, रुद्र, अश्विनौ आदि के अनेक मन्त्रों की आयुर्वेदपरक व्याख्या उपलब्ध होती है। अग्नि, सूर्य, आप:, मित्र, वरुण आदि प्राय: सभी देवों के मन्त्र प्राकृतिक चिकित्सा के पक्ष में विनियुक्त हो सकते हैं। कुछ सूक्त तो स्पष्टत: आयुर्वेद सम्बन्धी हैं।

जैसे शरीर के पञ्चभूतों से बने और जीव के अल्पज्ञ एवं अल्पशक्ति होने से अयुक्त आहार-विहार आदि के कारण उसका कभी-कभी रोगों से आक्रान्त हो जाना संभव है। स्वस्थ व्यक्ति रोगी न हो और रोगी स्वस्थ हो जाए यही चिकित्सा विज्ञान अथवा आयुर्वेदशास्त्र का प्रयोजन है।

**एतावदेव भैषज्यप्रयोगे फलमिष्टं स्वस्थवृत्तानुष्ठानञ्च।**
**यावद्धातूनां साम्यं स्यात्।** (चरक, शरीरस्थान अ० 6)

ताण्ड्य महाब्राह्मण का वचन है—**'यत्किञ्चद्वै मनुरवदत्तद् भेजषं भेषजतायाः॥'** उन्हीं भगवान् मनु की मान्यता है—**'सर्वज्ञानमयो हि सः'**-मनुष्य के लिए अपेक्षित सम्पूर्ण ज्ञान का भण्डार वेद है। इसलिए **'सर्वं वेदात् प्रसिध्यति'** किसी विषय में कुछ जानना हो तो खोजने पर मूलरूप में वह वेद में मिल जाएगा। महर्षि गौतम ने वेदों के स्वत: प्रामाण्य को सिद्ध करने के लिए न्यायदर्शन में कहा है—**'मन्त्रायुर्वेदप्रामाण्यवच्च तत्प्रामाण्यमाप्तप्रामाण्यात्'** (2.1.65) अर्थात् वेद के अन्तर्गत जो आयुर्वेद भाग है उसके अनुसार कार्यानुष्ठान से अनुकूल फल की प्राप्ति सिद्ध है। इससे उतने भाग का प्रामाण्य सिद्ध होने से आप्तप्रामाण्य को बल मिलता है और उसके आधार पर समस्त वेद का प्रामाण्य निश्चित हो जाता है। न्यायदर्शन के इस सूत्र में प्रकारान्तर से वेद में आयुर्वेद विषयक ज्ञान के उपलब्ध होने की स्थापना के साथ-साथ उसके अनुष्ठान के अनुकूल फल की प्राप्ति में आस्था व्यक्त की गई है।

अथर्ववेद के मन्त्र समुदाय का नाम ब्रह्म है। इसलिए अथर्ववेद का अपर नाम ब्रह्मवेद है। स्वयं अथर्ववेद में इसकी अन्त:साक्षी उपलब्ध है। अथर्ववेद (15.6.9) में चारों वेदों का नामोल्लेखपूर्वक वर्णन करते हुए गोपथ ब्राह्मण में भी कहा गया है—**'तमृच: सामानि यजूंषि ब्रह्म चानुव्यचलत।'** तदनुसार गोपथ ब्राह्मण में भी कहा गया—**'चत्वारो वै इमे वेदा ऋग्वेदो यजुर्वेद: सामवेदो ब्रह्मवेद:।'** गोपथ ब्राह्मण के अनुसार—**'अथर्वाङ्गिरोमिर्ब्रह्मत्वम्'**-अर्थात अथर्ववेद को जानने वाला ही ब्रह्मा होता है। इसलिए ब्राह्मण ग्रन्थों की घोषणा है—**'अथर्वैर्वा ब्रह्मा।'** इसका अभिप्राय यही है कि ऋग्वेद से लेकर अथर्ववेद तक चारों वेदों का जानने वाला ब्रह्मा के पद का अधिकारी होता है। इसी से औपचारिक रूप में ब्रह्मा के चतुर्मुख रूप की कल्पना कर ली गई प्रतीत होती है। पुन: अथर्ववेद (12.6.14) में 'ब्रह्म' के स्थान पर 'भेषज' पद रखकर कहा गया—**ऋच: सामानि भेषजा यजूँषि।** यही बात गोपथ ब्राह्मण (गो०पू० 3-4) में इन शब्दों में दुहराई गई—'यद् भेषजं तदमृतं तद ब्रह्म।' इस प्रकार 'ब्रह्म' तथा 'भेषज' अथर्व के पर्यायवाची होते हैं। इस बात की पुष्टि करते हुए ताण्ड्य-महाब्राह्मण में स्पष्ट शब्दों में कह दिया गया—**'भेषजं वा अथर्वाणि'** (12.9.10)। इस प्रकार चिकित्सा विज्ञान अथवा आयुर्वेद का अथर्ववेद से सीधा सम्बन्ध है। अथर्ववेद का ज्ञाता कितने आत्मविश्वास के साथ मृत्यु को आदेश देता है—**'कृणोम्यस्मै भेषजं मृत्यो मा पुरूषं वधी:** (अथर्व० 8.2.5)। दोनों पक्षों के आचार्य सुविज्ञ हैं। किसी के भी विचार को भ्रान्तिमूलक नहीं कहा जा सकता। प्रतीयमान इन विरोधी धारणाओं में समन्वय सम्भव है। आयुर्वेद के दो अभिप्राय हैं—व्यावहारिक एवं आध्यात्मिक। दोनों अभिप्रायों के अनुसार 'रोग-जरा, मृत्यु' पर विचार करना चाहिए। चरक, सुश्रुत आदि ने आयुर्वेद के व्यावहारिक पक्ष के अनुसार आयुर्वेद को अथर्ववेद का उपांग या उपवेद कहा है जो कि अथर्ववेद के विषयों के अनुरूप है। व्यावहारिक जीवन में होने वाले 'रोग-जरा-मृत्यु' बार-बार होते रहते हैं। आध्यात्मिक उपचारों द्वारा इन तीनों से मुक्ति पाकर मुक्तात्मा चिरकाल तक इससे विमुक्त रहता है। श्वेताश्वतर उपनिषद् (2.12) में कहा है—**'न तस्य रोगो न जरा न मृत्यु: प्राप्तस्य योगाग्निमयं शरीरम्।'**

पाँच भूतों को वश में करने के अनन्तर जब योगी का शरीर योग की अग्नि से देदीप्यमान हो जाता है तब वह रोगहीन हो जाता है। उस अवस्था में न उसे बुढ़ापा सताता है, न मृत्यु। योगानुसार ईश्वरप्रणिधान द्वारा रोग आदि से शीघ्र और स्थायी छुटकारा पाया जा सकता है।

साथ ही यह भी जानना आवश्यक है कि ऋग्वेद का मुख्य प्रतिपाद्य परमेश्वर है जिसके प्रणिधान द्वारा रोग आदि से पर्याप्त दीर्घकाल तक स्थायी तौर पर मुक्ति मिल जाती है और आत्मा की सम्यक् स्वनिष्ठस्थिति प्राप्त हो जाती है।

चरक, सुश्रुत और वाग्भट्ट आयुर्वेद के वृद्धत्रयी हैं। चरक संहिता (सूत्रस्थान अ० 30) में प्रश्न उठा—**'कस्मादायुर्वेद:'** आयुर्वेद कहाँ से आया? इसके उत्तर में महर्षि चरक ने कहा—**'चिकित्सा चायुषो हितायोपदिश्यते वेदञ्चोप-दिश्याभुर्वाच्यम्'** आयु के हितार्थ चिकित्सा शास्त्र का उपदेश किया गया है तथा वेद का उपदेश आयु का उपदेश करने के लिए किया गया है। पुन: प्रश्न उठा कि चारों वेदों में कौन-सा वेद मुख्यरूप में चिकित्सा शास्त्र का प्रतिपादक है। महर्षि ने उत्तर दिया—**'तत्र ष्मिजा पुष्टेनैवञ्चतुर्णामुक्सामयमुरथर्ववेदानां आत्मकोऽ अथर्ववेदे भक्तिरादेश्या। वेदो ह्याथर्वण: स्वत्ययनबलिमंगल-होमनियम प्रायाश्चत्तोपवासमन्त्रादिपरिग्रहाच्चिकित्सां प्राह।'** ऋक्, यजु:, साम और अथर्व-इन चारों वेदों में अथर्ववेद में आयुर्वेद का उपदेश है, क्योंकि अथर्ववेद में ही स्वस्त्ययन, बलि, मंगल, होम, नियम, प्रायश्चित्त, उपवास और मन्त्र आदि परिग्रह द्वारा चिकित्सा का उपदेश दिया गया है। प्रस्तुत सन्दर्भ में भगवान् सुश्रुत का वचन है—**'इह खल्वायुर्वेदो नाम यदुपाङ्गमथर्ववेदस्थ'** (सूत्रस्थान 1-3) काश्यप-संहिता (विमान स्थान) में भी आयुर्वेद को अथर्ववेद का उपवेद माना है। महर्षि दयानन्द जी के विचार भी उपरोक्त लिखित विचारों के अनुरूप ही हैं। जिस प्रकार कल्प और रस प्रक्रिया के द्वारा मनुष्य स्वास्थ्य व आयुवृद्धि का आविष्कार करके जीवन रक्षक के उपाय बताये हैं। इसी प्रकार मनुष्य कितनी भी औषधि खाकर या साधनों द्वारा कितना भी निरोग रह ले, कभी न कभी कुपथ्य कर ही लेता है। और उसी के परिणाम स्वरूप फिर से बीमारी होने का भय रहता है। आत्मा को वास्तविक सच्चा सुख मरण-जीवन के बंधनों से मुक्त होकर ही मिलता है। जैसे—**'त्रिविधदु:खात्यन्तनिवृत्ति-रत्यन्तपुरुषार्थ:'** (1.1) के इस सूत्र के अनुसार समस्त पुरुषार्थ दु:खों की अत्यन्त निवृत्ति के लिए किया जाता है। वात्स्यायन ने अपने भाष्य की प्रारम्भिक पंक्तियों में अपवर्ग के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए कहा है—'अभयमजरममृत्युपदं ब्रह्मक्षेमप्राप्तिरिति'। अपवर्ग अवस्था भय, जरा और मृत्यु से रहिता है तथा ब्रह्मक्षेम की प्राप्ति रूप है। ब्रह्मक्षेम ब्रह्मानन्द से भिन्न अन्य कुछ नहीं। उसकी प्राप्ति होना ही अपवर्ग है—

**सर्वं परवशं दु:खं सर्वमात्मवशं सुखम्।**
**एतद्विधात्समासेन लक्षणं सुखदु:खयो:॥**

परवशता में ही दु:ख का अनुभव होता है। प्रकृति के साथ सम्बन्ध आत्मा को बन्धन में इसलिए डालता है कि उसके संयोग से बाधाओं में वृद्धि होती है। बाधना, पीड़ा, ताप, दु:ख आदि शब्द इसी अर्थ को कहते हैं।

जिस प्रकार आयुर्वेद मनीषियों ने शरीर को स्वस्थ रखने के उपाय सुझाए हैं व उनका आविष्कार किया है। इसी भांति परमात्मा का ध्यान कर समाधि द्वारा परमात्मा का सान्निध्य कर आत्मा को सच्चा सुख प्राप्त करने के अनेक अष्टांग योगांगों का पालन करने की विधि बताई है और इनमें ध्यानयोग में कई प्रकार की विघ्न और उपविघ्न आते हैं जैसे व्याधि है, अभ्यास करने से जी चुराना, आलस्य आना, संशय होना, अविरति, प्रमाद, भ्रांति दर्शन होना, समाधि लगाकरके हट जाना, ये विघ्न और उपविघ्न बाधा डालते हैं। उनका प्रतिकार अथवा उपचार ऋषियों ने जाना है और उन बाधाओं को दूर करने का एकमात्र उपाय, श्रद्धा के साथ ओ३म् (प्रणव) का जाप करने से सभी विघ्न और उपविघ्न दूर हो जाते हैं।

ओ३म्

# यज्ञचक्र–इष्टकामधुक् हो

-: वेद-मन्त्र :-

**चक्रं यदस्याप्स्वा निषत्तमुतो तदस्मै मध्विच्चच्छद्यात्।**
**पृथिव्यामतिषितं यदूधः पयो गोष्वदधा ओषधीषु॥ 9॥ 331॥**

कालिदास ने क्या ही सुन्दर वर्णन किया है कि दिलीप पृथ्वी का दोहन करके यज्ञों के द्वारा द्युलोक को भरने में लगा था और इन्द्र वृष्टि करके द्युलोक को खाली करके पृथ्वी को सस्यपूर्ण बनाने में तत्पर था। एवं गीता के 'देवान् भावयतानेन, ते देवा: भावयन्तु व:, परस्परं भावयन्त: श्रेय: परमवाप्स्यथ' इस श्लोक के अनुसार दिलीप और इन्द्र का यह परस्पर भावन का चक्र चलता था। गीता ने इस यज्ञचक्र का वर्णन करके स्पष्ट कहा है कि 'एवं प्रवर्तितं चक्रं नानुवर्तयतीह य। अघायुरिन्द्रियारामो मोघं पार्थ सजीवति' जो चक्र को चलाता नहीं उसका जीवन पापमय इन्द्रियासक्ति का और व्यर्थ है। यह [यत्] =जो [अस्य] =इस जीव का (प्रजापति से सृष्टि के प्रारम्भ में दिया हुआ) [चक्रम्] =यह चक्र है वह [अप्सु] =कर्मों में [आ] =सर्वथा [निषत्तम्] =स्थित है आश्रित है। 'यज्ञ: कर्मसमुद्भव:' =यज्ञ कर्म से ही तो होने वाला है। कोई भी यज्ञ कर्म के बिना संभव नहीं। [अस्मै] =इस क्रियाशील के लिए [तद्] =यह यज्ञ चक्र [उतउ] =अब निश्चय से [मधुइत्] =माधुर्य को ही [चच्छद्यात्] =खूब चाहे अर्थात् इस यज्ञ से उसकी सब इच्छायें पूर्ण होकर उसका जीवन माधुर्य से परिपूर्ण हो। प्रजापति ने यज्ञ को देते हुए कहा ही था कि 'एष व: अस्तु इष्टकामधुक्'=ये तुम्हारे सब मनोरथों को परिपूर्ण करने वाला हो। 'नायं लोकोऽस्त्ययज्ञस्य कुतोऽन्य:कुरुसत्तम' =अयज्ञ का न इस लोक में कल्याण है, न परलोक में। यज्ञमय जीवन वाले को मोक्ष तो प्राप्त होता ही है, उसका यह लोक भी अत्यन्त मधुर बनता है। इस लोक में उसे क्या-क्या प्राप्त होता है? इस प्रश्न का उत्तर मंत्र के उत्तरार्ध में इस रूप में दिया है कि—

(1) [पृथिव्याम्] =इस पृथ्वी पर [अतिषितं] =अति-पूजायाम्, (सितं-बन्धुत्व) =उत्तम बन्धनों=सम्बन्धों, बन्धु-बान्धवों वाला [यत्] =जो [ऊध:]= (The apartment where the friends are invited) सुरक्षित घर है तथा (2) [गोषुपय:] = गौवों में जो दूध है और (3) [ओषधीषु पय:] =औषधियों में जो रस है ये तीन चीजें [अदधा:] = इसका धारण करती हैं। दूसरे शब्दों में इसे मित्रों व बन्धुओं का भरा घर प्राप्त होता है, इसे गौवों के दूध की कमी नहीं होती और इसके घर में ओषधियों का रस सदा सुलभ रहता है। संक्षेप में, मित्र हैं और उत्तमोत्तम खान-पान के पदार्थ हैं और इस प्रकार के घर एक छोटा-सा स्वर्ग बना हुआ है। संसार में बन्धु शून्यता व मित्रों का अभाव अत्यन्त चुभने वाला होता है और परिवार भरपूर हो तो निर्धनता एक अभिशाप के समान प्रतीत होती है। परन्तु जहां मित्र हैं, श्री है—वहां तो स्वर्ग ही बन जाता है। यह यज्ञचक्र का प्रवर्तक अपने मित्रों के साथ 'गोदुग्ध व ओषधियों के मधुर रसों' का सेवन करता हुआ 'गौर=वीति:' उज्ज्वल शुभ्र सात्त्विक भोजन का करने वाला है (वीति=भोजन)। सात्त्विक भोजन से शान्त प्रकृति वाला होने के कारण वासनाओं से दूर रहता हुआ यह शाक्त्य= शक्तिसम्पन्न है।

**यज्ञमय जीवन गर बनायेंगे। पतन के दु:ख से बच जायेंगे॥**
**हर्षित प्रफुल्लित जीवन होगा। यशोगान उसका घर-घर होगा॥**
**देह पाकर इतना कर जायेगा। जन्म सफल यहां हो जायेगा॥**

यज्ञ करने वाला तथा यज्ञमय जीवन बिताने वाला सदा सुखी तथा उन्नत होता है। याज्ञिक व परोपकारप्रिय व्यक्तियों के आधार पर ही यह भूमि स्थित है। जो धार्मिक परोपकारी मनुष्यों को कष्ट देता है वह सनाथ भी अनाथ हो जाता है। दूसरे कर्मों का फल देर में मिल सकता है परन्तु धार्मिकों पर किये अनर्थ का फल सद्य: मिलता है। इतिहास साक्षी है। रावण का निष्कण्टक राज्य का सिक्का था। भिखारी एवं बालक समझकर राम व लक्ष्मण को छेड़ बैठा। राज्य तो गया ही परिवार व जीवन से भी हाथ धो बैठा। एक सती साध्वी के तिरस्कार के बदले दुर्योधन का जो हाल हुआ सब जानते हैं। आचार्य द्रोणाचार्य का अनादर का फल द्रुपद के पांवों में पड़कर गिड़गिड़ाने का मिला। नन्दवंश का नाश एक विद्वान् नीतिज्ञ ब्राह्मण के अनादर होने पर हुआ। चाणक्य जैसे तपस्वी को चोटी खोलकर नन्दवंश की समाप्ति की प्रतीज्ञा करनी पड़ी। औरंगजेब द्वारा जजिया टैक्स तक लगा धर्मात्माओं को यातना पहुंचाने से मुगल वंश समाप्त हुआ। जलियावाले बाग ने अंग्रेजों की कब्र खोदी। इतिहास में अनेक उदाहरण हैं। जिन्होंने धर्मात्माओं पर अत्याचार किये हैं, समूल बिस्तर उठाकर गये हैं। प्रत्येक व्यक्ति से लेकर उच्च संगठन तक परिणाम को विचार कर कार्य करें।

**—आचार्य बलदेव**

# ईश्वर सर्वव्यापक और न्यायकारी है

❑ पं० नन्दलाल निर्भय सिद्धान्ताचार्य चलभाष : 9813845774

वेद संसार के प्राचीनतम धर्मग्रन्थ हैं, जिन्हें विद्वान् ईश्वरीय ज्ञान मानते हैं। वेदों का ज्ञान जीव-मात्र का कल्याण करता है। वैदिक पथ पर चलने वाला व्यक्ति जीवन भर सुखी रहता है। वैदिक धर्मी व्यक्ति कभी पापकर्मी नहीं हो सकता। वस्तुत: वह ईश्वरभक्त, धर्मात्मा, परोपकारी बन जाता है।

वेद ईश्वर को सर्वव्यापक, सर्वज्ञ और न्यायकारी बताये हैं। वेदों का सिद्धान्त सच्चा है। ईश्वर को एकदेशी साकार मानने के कारण ही संसार के नर-नारी पापकर्म कर रहे हैं। कोई कहता है परमात्मा सातवें आसमान पर रहता है, कोई कहता है चौथे आसमान पर रहता है। पौराणिक कहते हैं कि क्षीरसागर में शेषशय्या पर लेटा हुआ है तथा लक्ष्मी जी उसके चरण दबा रही हैं। कोई कहता है ईश्वर कैलाश पर्वत पर रहता है। कोई उसे वृन्दावन, कोई काशी, कोई जगन्नाथ, कोई रामेश्वर का वासी मानता है। ये विचार पूरी तरह निराधार व तथ्यहीन हैं।

जो व्यक्ति परमात्मा को सर्वव्यापक, न्यायकारी, सर्वज्ञ मानेगा वह पापकर्म कभी नहीं करेगा।

एक बार बीरबल से अकबर ने पूछा—बीरबल मेहरबानी करके यह बताओ कि ईश्वर है या नहीं? वह कहाँ रहता है और दिखाई क्यों नहीं देता तथा वह क्या काम करता है?

बीरबल महान् विद्वान्, बुद्धिमान्, हाजिर जवाब, शास्त्रार्थ महारथी, दूरदर्शी व्यक्ति थे। बादशाह अकबर के प्रश्न को सुनकर बीरबल ने कहा—"श्रीमान् जी! पहले एक लोटा दूध मँगवाओ तब आपके प्रश्नों का उत्तर दिया जाएगा।"

बीरबल के कहने के अनुसार बादशाह ने एक लोटा दूध मंगवाकर बीरबल के हाथों में दे दिया। बीरबल ने दूध का लोटा बाएँ हाथ में रख लिया तथा दाएँ हाथ की अंगुलियाँ दूध में डालकर दूध को हिलाने लगा। यह देखकर अकबर बोला—"पंडित जी! आप यह क्या कर रहे हो?" बीरबल बोले—"बादशाह सलामत! मैं इसमें से घी निकाल रहा हूँ।" यह सुनकर अकबर हँस पड़ा और कहने लगा—"श्रीमान् जी! ऐसे घी नहीं निकलेगा"। बीरबल ने पूछा—"तो आप ही बताओ कि इसमें से घी कैसे निकलेगा?"

अकबर बोला—"पहले इसमें दही या छाछ डालकर इसे जमाया जायेगा, फिर मथनी (रई) से मथा (चलाया) जाएगा तब इसमें से मक्खन निकलेगा, फिर मक्खन को बर्तन में रखकर आग पर तपाया जाएगा, उसे चलनी से छाना जाएगा तब घी प्राप्त होगा।"

अकबर की बातें सुनकर बीरबल ने कहा—"श्रीमान् जी! जैसे दूध में घी मौजूद है किन्तु दिखाई नहीं देता। ऐसे ही परमात्मा सर्वव्यापक है किन्तु वह इन चर्मचक्षुओं से दिखाई नहीं देता। वह परमात्मा ज्ञानरूपी चक्षुओं से देखा जाता है। उस प्रभु को प्राप्त करने के लिए वेदमार्ग पर चलने की और यज्ञमय जीवन बनाकर योगाभ्यास करने की आवश्यकता है।"

बीरबल का उत्तर सुनकर अकबर ने पूछा—"वह काम क्या करता है?" यह सुनकर बीरबल बोले—"परमात्मा हर व्यक्ति के कर्मों के अनुसार उसे उचित फल देता है अर्थात् न न्यून न अधिक।"

प्रिय सज्जनो! यदि आप अपना कल्याण चाहते हो तो वैदिकधर्मी बनो। शुभकर्म करो तथा दूसरों को भी समझाओ।

**मानव तन अनमोल है,**
**करो भलाई मीत।**
**ईश्वर विश्वासी बनो,**
**जग को लोगे जीत॥**
**कण-कण में वह व्याप्त है,**
**अजर-अमर भगवान्।**
**जपते उसको सन्त जन,**
**प्रभु है सुख की खान॥**

संपर्क-आर्य सदन, बहीन, जनपद-पलवल (हरयाणा)

## जरा मुस्कुराइये

टीचर छात्रों से—कोई ऐसा वाक्य बनाओ जिसमें भूत, भविष्य और वर्तमांन तीनों कालों का प्रयोग हो।

एक छात्र—सर मैं सुनाऊँ? हाँ, सुनाओ।

छात्र—आर्यसमाज को सच्चाई से प्यार था, आज भी है और कल भी रहेगा।

—देवराज आर्यमित्र, WZ-428, हरीनगर, नई दिल्ली-64

# अहिंसा और धर्म

❑ मनमोहन कुमार आर्य

अंहिसा और धर्म दो शब्द हैं। दोनों शब्दों का इतिहास उतना ही पुराना है जितना कि इस सृष्टि का। सृष्टि के आरम्भ में मनुष्य अकेला या समूह में मिलकर भी किसी भाषा व उसके शब्दों आदि को नहीं बना सकता था जब तक कि उन्हें किसी अन्य दैवीय सत्ता से भाषा का ज्ञान न मिले। अतः यह सिद्ध है कि संसर की सर्व प्राचीन व पहली भाषा का ज्ञान उन्हें इस संसार को बनाने वाली सत्ता से ही प्राप्त हुआ था। लगभग दो अरब (1,96,08,53,113) वर्ष पूर्व यह संसार बना है जो सुव्यवस्थित रूप से चल रहा है। कोई भी बुद्धिपूर्वक रचना स्वयमेव नहीं होती, इसके लिए बुद्धिमान रचनाकार की आवश्यकता होती है। हम जितनी भी वस्तुएं अपने दैनिक जीवन में प्रयोग करते हैं वह सब किसी अपौरुषेय या पौरुषेय सत्ता द्वारा बनाई गई होती हैं, स्वतः कोई नहीं बनती। एक उदाहरण लेते हैं। हम सब रोटी खाते हैं, यह रोटी अपने आप नहीं बनती, परन्तु इसे बनाना पड़ता है। किसान गेहूं बोता है। गेहूं खरीद कर उसको पिसाया जाता है। आटा घर में लाकर उसे पानी से गूंद कर उससे रोटी बनाई जाती है और फिर अग्नि में तपा कर उसे परोसा या खाया जाता है। इससे यह सिद्ध है कि रोटी जैसी वस्तु के लिए भी कई रचनाकारों की आवश्यकता होती है, जो बुद्धिपूर्वक इस सारे काम को अंजाम देते हैं। इसी प्रकार सृष्टि की रचना, उसके संचालन व व्यवस्था जैसे कठिन व जटिल कार्यों का सम्पादन स्वतः व स्वयमेव कदापि नहीं हो सकता। इसलिए उसे सृष्टिकर्ता नाम देना सर्वथा उचित है। इस नाम के नामी की खोज की जानी चाहिए, ठीक वैसे ही जैसे वैज्ञानिक करते हैं परन्तु यह ध्यान रखना होगा कि सृष्टिकर्त्ता भौतिक पदार्थ न होकर एक चेतन पदार्थ है, लगभग वैसा ही जैसा कि हमारा जीवात्मा है। यह भी तथ्य है कि दोनों सत्तायें पृथक्–पृथक् हैं व दोनों के गुणों में कुछ समानतायें एवं कुछ भिन्नतायें हैं। यदि तर्क व बुद्धिपूर्वक संसार के रचयिता का विचार किया जाये तो वह सत्ता चेतनस्वरूप, सर्वशक्तिमान्, सर्वज्ञ, सर्वव्यापक, निराकार, अनादि, अजन्मा, नित्य, सृष्टि निर्माण–संचालन व प्रलय का ज्ञान रखने वाली, निरवयव, एकरस व आनन्द से भरपूर, अनन्त, अमर, अविनाशी, निष्पक्ष, न्यायकारी, सभी जीवों को उनके कर्मों के अनुसार जीवनदात्री एवं उनके प्रारब्ध व पूर्व जन्मों के कर्मों के अनुसार कर्मफलदात्री आदि स्वरूप वाला सिद्ध होती है। जीवधारी मनुष्यों के जीवन का उद्देश्य ईश्वर के इसी स्वरूप को जानकर उसे सिद्ध करना, प्राप्त करना व उसका साक्षात्कार करना है। कहा जाता है कि स्तुति–प्रार्थना, उपासना व ध्यान आदि करने पर कालान्तर में सभी कुवासनाओं व अविद्या आदि के समाप्त होने पर समाधि की अवस्था आती है। उस समाधि की अवस्था में ही ईश्वर का साक्षात्कार होता है। क्या आज तक किसी व्यक्ति को ईश्वर का साक्षात्कार हुआ है, यह प्रश्न हो सकता है? इसका उत्तर है कि सृष्टि की आदि से अब तक असंख्य लोगों को ईश्वर का साक्षात्कार हुआ है। महर्षि दयानन्द सरस्वती का नाम उन लोगों में सम्मिलित है जिन्हें ईश्वर का साक्षात्कार हुआ था। साक्षात्कार किए हुए मनुष्य की पहचान क्या है, तो इसका उत्तर यह है कि वह निरभिमानी, विनम्र, ईश्वर के सत्यस्वरूप को जानने वाला व दूसरों को पूछने व बिना पूछे ही प्रचार करने वाला, आडम्बर, पाखण्ड, कुरीतियों व अन्धविश्वासों से रहित व उनका तीव्र खण्डन करने वाला होता है। उसका अपना जीवन बहुत ही सरल व तप–त्यागवाला, वैराग्यवान व सुख के साधनों से रहित होता है। वह लोगों से भीख व दान मांग कर उससे सुख सुविधा वाले बड़े–बड़े आश्रम व भवन नहीं बनवाता न ही अपने अन्धभक्त शिष्य या भक्त तैयार करता है। उसका काम केवल ईश्वर के सत्यस्वरूप का ज्ञान कराना, सन्ध्या व गायत्री, अग्निहोत्र–देवयज्ञ, बलिवैश्वदेव यज्ञ आदि का ज्ञान व अभ्यास कराना होता है। शिष्य व भक्त से उसे अपने व्यक्तिगत प्रयोजन के लिए किसी प्रकार का धन, दान व भौतिक वस्तुओं की आवश्यकता नहीं होती है। भूखा रहने पर भी वह भिक्षा मांग कर नहीं खाता। वह कई दिनों तक भूखा रहकर भी ईश्वर प्रदत्त मस्ती में रहता है और आम व्यक्ति, समाज व देश के कल्याण के लिए हर पल व हर क्षण तत्पर रहता है। ऐसा जिसका जीवन हो वह व्यक्ति ईश्वर का साक्षात्कार किए हुए होगा, ऐसा अनुमान लगता है। ऐसे एक ही व्यक्ति को हम जानते हैं और वह महर्षि दयानन्द सरस्वती थे जिनका जन्म 12–2–1825 को व मृत्यु 30–10–1883 को हुई।

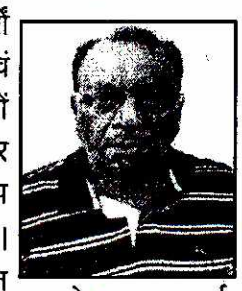

मनमोहन कुमार आर्य

**धर्म का कुछ–कुछ पयार्यवाची शब्द, सत्य व कर्तव्य है। जो सत्य व कर्तव्य नहीं हैं, वह धर्म कदापि नहीं हो सकता। धर्म सद्गुणों का समूह है जिसे सभी मनुष्यों को धारण करना है। संसार के सभी मनुष्यों का धर्म वस्तुतः एक ही है, जैसे कि ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना व उपासना, देवयज्ञ अग्निहोत्र करना, धैर्य धारण करना, क्षमाशील होना, देशभक्ति, ज्ञानजिज्ञासु होना, माता–पिता की सेवा, क्रोध न करना, सत्य का आचरण, असत्य का त्याग, आचार्यों, गुरुओं व अध्यापकों के प्रति श्रद्धा रखना व मुसीबत में उनकी सहायता करना, आप्त पुरुषों, ज्ञानी व विद्वानों का आदर–सत्कार करना, अपना काम, व्यवसाय व रोजगार आदि पूर्ण सत्यता, निष्ठा, निरपेक्ष व निःस्वार्थ भाव से करना। धर्म की एक परिभाषा यह भी है कि हमें वह व्यवहार कदापि नहीं करना है जो हम दूसरों से अपने प्रति पसन्द न करते हों।**

अहिंसा व धर्म की चर्चा कर रहे हैं। किसी भी प्राणी के प्रति वैरभाव न रखना एवं मन से वैरभावना को पूर्णतया त्याग देना ही अंहिसा का सत्य व यथार्थ अर्थ है। अहिंसा का विपरीत शब्द हिंसा है जिसका अर्थ वैरभाव या शत्रुभाव होता है। जिसके प्रति वैरभाव होता है, मनुष्य उसे दुःख व हानि पहुंचाता है। यदि अकारण किसी को दुःख व हानि पहुंचायी जाये तो वह हिंसा है। आजकल बहुत से लोग मांसाहार करते हैं। कहते हैं कि मांसाहार स्वादिष्ट होता है जिससे शारीरिक बल में वृद्धि होती है। हम अनुभव करते हैं कि यह दोनों ही बातें गलत हैं। मांस में अपना कोई स्वाद नहीं होता, इसी कारण उसे फलों की तरह कच्चा या रोटी, चावल, दाल व भाजी की तरह जल में पका कर नहीं खाया जाता अपितु उसमें नाना प्रकार के मसाले एवं अन्य घृत आदि पौष्टिक व स्वादिष्ट पदार्थ मिलाये जाते हैं। जहां तक बल की बात है, उसमें भी यह दावा खरा नहीं उतरता। हम हाथी व घोड़े का उदाहरण ले सकते हैं। यह दोनों ही प्राणी शाकाहारी है। हाथी के शरीर का बल तो सारे जग में प्रसिद्ध है। कोई मांसाहारी प्राणी हाथी के बल से अधिक नहीं है। इसी प्रकार घोड़ा गति का प्रतीक है। आज भी लोग घुड़सवारी करते हैं। घोड़े से पहाड़ व ऊंची–नीची भूमि जहां सड़कें व मार्ग बने हुए नहीं हैं, ऐसे ऊंचे–नीचे व टेढ़े–मेढ़े मार्गों पर तेजी से दौड़ लगाई जा सकती है और गन्तव्य तक शीघ्र पहुंचा जा सकता है। गति के प्रतीक घोड़े के नाम पर ही अश्व–शक्ति या horse power शक्ति की इकाई के रूप में प्रयोग में लाते हैं। यह भी पाया गया है कि मांसाहारी मनुष्य व पशु डरपोक या भीरू होते हैं व मांसाहार अनेक रोगों को जन्म देता है। मांसाहार एक कुसंस्कार है, जो बचपन में माता–पिता व बाद में संगति के कारण होता है। इसका प्रचलन ऐसे स्थानों पर हुआ जहां लोगों में ज्ञान व संस्कार नहीं थे तथा भोजन के लिए प्रचुर अन्न व फल आदि वनस्पतियां उपलब्ध नहीं थीं।

यदि संसार में अंहिसा का प्रचार होगा तो न तो हम किसी से वैर करेंगे और न कोई हमसे वैर करेगा। इसका परिणाम यह होगा कि हम भी सुरक्षित होंगे व अन्य भी सुरक्षित होंगे। आज सर्वत्र हिंसा का बोलबाला है। हिंसा कई रूप में देखने में आती है। गाय, बकरी, भेड़े, मछली, मुर्गी–मुर्गा कबूतर व खरगोश आदि कोई भी पशु सुरक्षित नहीं है। हम एक बार शिलांग मेघालय घूमने गये। वहां के टैक्सी चालक ने सायं विदाई के क्षणों में हमसे पूछा की क्या हमने शिलांग में कहीं कोई पक्षी देखा। हमारे न कहने पर उन्होंने बताया की यहां

क्रमशः अगले पृष्ठ पर....

## अहिंसा और धर्म.... पृष्ठ 4 का शेष....

के लोगों ने मांसाहारी होने के कारण चुन–चुन कर सभी पक्षियों का सफाया कर दिया। हमारी दृष्टि में यह ईश्वर के कामों में बाधा एवं हिंसा है एवं "जिओ और जीनो दो" के सिद्धान्त के विरुद्ध है। अपने अध्ययन के आधार पर हम तो यहां तक कहेंगे कि यह मानवता व मनुष्यता के सिद्धान्त के भी विरुद्ध है। देश भर में आजकल बलात्कार की घटनायें हो रही हैं। यह भी हिंसा की प्रवृत्ति व मनुष्य के भीतर वैर व काम भावना के संस्कारों के कारण हो रही है। काम की पूर्ति न होने पर क्रोध उत्पन्न होता जो हिंसा को जन्म देती है। इस प्रवृत्ति व संस्कार को जड़ से निकालना होगा। हिंसा की प्रवृत्ति प्रायः छोटे–मोटे विवादों में भी देखी जाती है जहां विवाद को हल करने स्थान पर छोटी–सी बात बहुत बड़े विवाद या झगड़े का रूप ले लेती है और उसमें मार–पीट, आग–जनी व जानमाल तक की हानि हो जाती है। अतः जो व्यक्ति हिंसा करता है या उसका समर्थक है वह किसी भी मत का क्यों न हो, धार्मिक तो कदापि नहीं हो सकता।

कारण यह है कि हिंसा का जन्म क्रोध से होता है व क्रोध, कामना व काम से। क्रोध धर्म का विरोधी व अधर्म का प्रतीक है। अतः जो लोग क्रोधी स्वभाव के हैं वह जान लें कि वह धार्मिक कदापि नहीं अपितु व्यक्तिगत रूप से वह स्वयं के प्रति भी अधर्म व पाप करनेवाले हैं। हम यहां यह भी बता दें कि पाप तीन प्रकार के हैं। मन, वचन व कर्म से किए जाने वाले बुरे व अशुभ कार्य पाप होते हैं। यदि मन में बुरा विचार या क्रोध आदि उत्पन्न होता है तो यह मानसिक पाप है। यदि हम किसी को बुरे वचन कहते हैं तो वह वाचिक पाप तथा यदि हम कर्म से बुरा कार्य व हिंसा आदि करते हैं तो वह कायिक शरीर से किया जाने वाला पाप होता है। प्रायः सभी मनुष्य इन तीनों पापों से युक्त हैं अतः मन, वचन व कर्म से जो जितना बुरा काम करता है, वह उस सीमा तक अधर्मी व पापी है। इस बुराई से सभी को बचना चाहिये।

अंहिसा के बारे में कुछ भ्रान्तियां भी हैं। एक कहावत है कि शठे शाठ्यं समाचरेत्। इसे भाषा में 'यथायोग्य व्यवहार' कह सकते हैं। बुरे व्यक्ति के प्रति किन्हीं परिस्थितियों में बुरा व्यवहार करना ही उचित होता है। कई बार बलवान लोग निर्बल लोगों के प्रति जान–बूझकर अन्याय करते हैं। समझाने पर उन्हें असर नहीं पड़ता। ऐसे लोगों के प्रति किया जाने वाला यथायोग्य व्यवहार, उचित बल प्रयोग या हिंसा, अंहिसा की ही श्रेणी में आती है। ऐसी यथायोग्य हिंसा वर्जित नहीं है। इससे हिंसा व अन्याय करने वाला व्यक्ति सुधरता है और इससे साधारण, निर्बल व भोले–भाले लोग अन्याय, हिंसा व दुःखों से बचते हैं। आजकल गुण्डे, बदमाश, समाज विरोधी तत्त्व व कुछ धार्मिक लोग जो दूषित अन्तःकरण रखते हैं एवं आतंकवादी आदि लोग सामान्य लोगों को परेशान व पीड़ित करते हैं। ऐसे लोगों को प्रायः अंहिसा से सुधारना, उनका स्वभाव बदलना, उन्हें बुरे कामों व हिंसा से रोकना एवं उनका हृदय परिवर्तन नहीं किया जा सकता। इनके प्रति वह सभी उपाय चाहे वह हिंसा की श्रेणी में ही क्यों न आते हों, का प्रयोग कर उन्हें व उन जैसे दूसरे लोगों को भयतीत कर सही रास्ते पर लाना वा सुधारना आवश्यक है जिससे हिंसाजनित अपरोध समाप्त वा कम हों। अहिंसा का यह अर्थ कदापि नहीं समझना चाहिये कि यदि कोई एक गाल पर थप्पड़ मारे तो दूसरा आगे कर देना चाहिये अपितु ऐसे व्यक्ति को एक के बदले में दो थप्पड़ मार कर उसकी हिंसा की प्रवृत्ति को बदलना ही यथार्थ अंहिसा है। इससे हिंसक की प्रवृत्ति सुधरती है। अतः यह हिंसा के रोग का उपचार है। मार खाने वाले को भीरू कहा जाता है और वह प्रायः होता भी है। इससे हिंसक व्यक्ति को बदला नहीं जा सकता। इस प्रकार की अंहिसा अर्थात् हिंसकों के प्रति हिंसा के व्यवहार के न होने के कारण ही सामाजिक अपराध बढ़ रहे हैं। हम समझते हैं कि भगवान् राम व भगवान् कृष्ण के जीवन का अध्ययन करने पर इन विचारों की पुष्टि होती है।

आइये, अब धर्म को भी जान लेते हैं। धर्म संस्कृत का शब्द है जिसका पर्यायवाची शब्द अन्य किसी भाषा में नहीं है। धर्म, मत, मजहब, रिलीजियन, आस्थाओं, मिथ्या मान्यताओं व भावनाओं सबसे भिन्न है। धर्म का कुछ–कुछ पयार्यवाची शब्द, सत्य व कर्तव्य है। जो सत्य व कर्तव्य नहीं हैं, वह धर्म कदापि नहीं हो सकता। धर्म सद्गुणों का समूह है जिसे सभी मनुष्यों को धारण करना है। संसार के सभी मनुष्यों का धर्म वस्तुतः एक ही है, जैसे कि ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना व उपासना, देवयज्ञ अग्निहोत्र करना, धैर्य धारण करना, क्षमाशील होना, देशभक्ति, ज्ञानजिज्ञासु होना, माता–पिता की सेवा, क्रोध न करना, सत्य का आचरण, असत्य का त्याग, आचार्यों, गुरुओं व अध्यापकों के प्रति श्रद्धा रखना व मुसीबत में उनकी सहायता करना, आप्त पुरुषों, ज्ञानी व विद्वानों का आदर–सत्कार करना, अपना काम, व्यवसाय व रोजगार आदि पूर्ण सत्यता, निष्ठा, निरपेक्ष व निःस्वार्थ भाव से करना। धर्म की एक परिभाषा यह भी है कि हमें वह व्यवहार कदापि नहीं करना है जो हम दूसरों से अपने प्रति पसन्द न करते हों। मांसाहार, मद्यपान, धूम्रपान व किसी भी प्रकार का सामिष भोजन अकर्त्तव्य, अधर्म व अनुचित है। जन्म–जन्मान्तर में ऐसा करने पर ईश्वर की व्यवस्था से अवश्य ही फल भोगने होंगे। पाप बिना भोगे समाप्त नहीं हो सकते। हम वर्तमान में भी जिन लोगों को दुःखी, परेशान, रोगी, समस्याग्रस्त व तनावों से घिरा हुआ देखते हैं वह कुछ–कुछ इस जन्म के व कुछ पूर्व जन्म के फलों को भोग रहे होते हैं। इसी प्रकार पशु–पक्षी–कीट–पतंग आदि विभिन्न योनियों का कारण पूर्व जन्म के बुरे कर्म हैं। यदि किसी को यह समझ में न आये तो उन्हें वैदिक साहित्य का अध्ययन करना चाहिये, इससे कर्म के फलों का रहस्य समझ में भी आयेगा और इसका प्रत्यक्ष ज्ञान भी प्राप्त होगा। धर्म को यदि विस्तार से जानना हो तो वेद, वैदिक साहित्य, सत्यार्थ प्रकाश, आर्याभिविनय, ऋग्वेदादि–भाष्यभूमिका एवं संस्कार विधि आदि ग्रन्थों का अध्ययन करना चाहिये।

महर्षि दयानन्द का जीवन चरित भी एक प्रामाणिक घटनाओं का ऐसा दस्तावेज है जो आज तक संसार में जन्मे लोगों में अद्वितीय व हमारे लिए आदर्श है। उसे सम्पूर्ण रूप से पढ़कर ही जीवन का महत्त्व, कर्त्तव्य व उद्देश्य को समझा जा सकता है। संक्षेप में हम यह कहेंगे कि अंहिसा का व्यवहार व स्वभाव प्रत्येक मनुष्य को बनाने चाहियें। हिंसकों के प्रति यथा आवश्यकता इस व्यवहार में परिवर्तन कर लेना चाहिये। अंहिसा धर्म का ही एक महत्त्वपूर्ण अंग है। धर्म वह कर्म हैं जिनसे जीवन में अभ्युदय व उत्थान हो, केवल भौतिक समृद्धि ही न हो जो कि कई समस्याओं को जन्म देती है। धर्म वह भी जिससे मृत्यु के पश्चात् जन्म–मरण के चक्र से छुट्टी व मुक्ति मिल जाये। हम आशा करते हैं कि पाठक इस लेख से लाभान्वित होंगे।

वर्तमान समय में अंहिसा व धर्म को सर्वत्र इस रूप में यदि प्रयोग करते हैं व वैश्विक स्तर पर भी इसे मान्यता मिलती है तो इससे व्यक्तिगत, सामाजिक व विश्वस्तर पर सुख व शान्ति स्थापित की जा सकती है। समालोचनात्मक विचारों का सदैव स्वागत है।

–196 चुक्खूवाला–2, देहरादून
फोन 09412985121

## आर्यसमाज सफीदों जिला जीन्द का निर्वाचन

प्रधान–श्री यादविन्द्र बराड, उपप्रधान–श्री सुरेन्द्र वत्स, मंत्री–संजीव कुमार, उपमंत्री–श्री विष्णु, कोषाध्यक्ष–श्री निवास, पुस्तकाध्यक्ष–श्री विनोद कुमार।

## आर्यसमाजों के उत्सवों की सूची

| | | |
|---|---|---|
| 1. | आर्यसमाज जवाहर नगर, पलवल | 6 से 10 नवम्बर 2013 |
| 2. | आर्यसमाज भाकली, जिला रेवाड़ी | 9 से 10 नवम्बर 2013 |
| 3. | ओम् साधना मण्डल, करनाल | 16 से 17 नवम्बर 2013 |
| 4. | आर्यसमाज भाण्डवा, जिला भिवानी | 16 से 17 नवम्बर 2013 |
| 5. | आर्यसमाज खेड़की, जिला महेन्द्रगढ़ | 16 से 17 नवम्बर 2013 |
| 6. | आत्मशुद्धि आश्रम बहादुरगढ़, जिला झज्जर | 20 नवम्बर 2013 |
| 7. | आर्यसमाज बालधनकलां, जिला रेवाड़ी | 23 से 24 नवम्बर 2013 |
| 8. | कन्या गुरुकुल खरल, जिला जीन्द | 7 से 8 दिसम्बर 2013 |

—प्राचार्य अभय आर्य, सभा वेदप्रचाराधिष्ठाता

# सरल आध्यात्मिक शिविर सम्पन्न

सरल आध्यात्मिक शिविर 28 अक्तूबर से 1 नवम्बर 2013 तक गुरुकुल भैयापुर लाढौत जिला रोहतक में शिविराध्यक्ष स्वामी विवेकानन्द जी परिव्राजक, निदेशक दर्शन योग महाविद्यालय, रोजड़ (गुजरात) की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। समापन समारोह में आर्य जगत् तपस्वी आचार्य बलदेव जी प्रधान सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा नई दिल्ली आशीर्वचन सरल आध्यात्मिक शिविर के शिविरार्थियों को देने पहुंचे। शिविरार्थियों ने सन्ध्या, आत्म-निरीक्षण की कक्षा वैदिक विद्वान् स्वामी आशुतोष जी, योग, शंका का समाधान स्वामी विवेकानन्द जी तथा व्यायाम आसन सार्वदेशिक आर्यवीर दल के मन्त्री चन्द्रदेव जी तथा योगाचार्या मंजू ने सिखाया।

शिविर आयोजक आचार्य हरिदत्त गुरुकुल लाढौत, श्री रणवीर सिंह बल्हारा, श्री हवासिंह राठी, श्री करणसिंह मोर, श्री सुखवीर सिंह दहिया, श्री बलराज खुराना, श्री अनुपम श्योराण, श्री रघुवीर सिंह कादयाण, श्री सत्यपाल दहिया, श्री संजीव सचदेवा व श्री शमशेर दलाल ने सरल आध्यात्मिक शिविर की सराहनीय व्यवस्था की तथा शिविर को सुन्दर व्यवस्था दी।

शिविर में पूरे प्रदेश से 218 शिविरार्थियों ने भाग लिया। सभी शिविरार्थियों ने सरल आध्यात्मिक शिविर में नियमों का पालन करते हुए पूरा लाभ उठाया।

लगभग दो दर्जन शिविरार्थियों ने अपने-अपने विचार अनुभव बताते हुए कहा कि इस शिविर से हमारे जीवन का कांटा ही बदल गया, अब तक तो हम अपने आपको समझ ही नहीं पाये थे कि हम ईश्वर सान्निध्य में कहाँ तक पहुंच पाये हैं।

इस शिविर की विशेषता यह रही कि शंका-समाधान की कक्षा में स्वामी विवेकानन्द जी ने सभी शिविरार्थियों के भ्रम दूर किए। स्वामी आशुतोष जी ने सन्ध्या में ध्यान लगाने तथा अपना आत्म-निरीक्षण करने की जो विधि बताई उससे सभी शिविरार्थी बड़े संतुष्ट हुए तथा श्री चन्द्रदेव आर्य तथा योगाचार्या मन्जू ने स्वस्थ रहने के लिए व्यायाम आसन सिखाये।

समापन समारोह में मुख्य वक्ता चारों वेदों के विद्वान् आचार्य सनत्कुमार जी ने एक घण्टे तक अपना प्रवचन किया। आचार्य सनत्कुमार जी के प्रवचन को सुनकर सभी शिविरार्थी स्तब्ध रह गये। उनके प्रवचन में सभी शिविरार्थियों पर एक अमिट छाप छोड़ी। उनके साथ गोशाला संघ, गोरक्षा दल, हरियाणा के प्रधान व मन्त्री क्रमश: आचार्य योगेन्द्र आर्य, आचार्य सर्वमित्र आर्य एवं मा० रामपाल दहिया भी पहुँचे।

**—रणवीर सिंह बल्हारा, सरल आध्यात्मिक शिविर समिति, रोहतक**

# माता सोनादेवी जी आर्या का स्वर्गवास व श्रद्धांजलि सभा सम्पन्न

माननीया सोनादेवी जी आर्या धर्मपत्नी वैद्य जगन्नाथ जी आर्य खानपुरकलां जिला सोनीपत का आकस्मिक निधन दिनांक 16.10.2013 को सायं 6 बजे हृदयगति रुक जाने से हो गया। माताजी लगभग 80 वर्ष तक आर्य विचारों का पालन करती रही। उनके स्वर्गवास के बाद दिनांक 17.10.2013 को प्रात:काल वैदिक रीति के अनुसार दाह-संस्कार किया गया। मंत्रपाठ श्री हरिश्चन्द्र कर्नाटक तथा देवप्रकाश जी द्वारा किया गया। तत्पश्चात् निरन्तर 12 दिन तक प्रात: यज्ञ व गीतापाठ का कार्यक्रम चलता रहा। इन दिनों में अनेक मिलने वालों ने संवेदना प्रकट करते हुए श्रद्धांजलि दी।

दिनांक 27-28 को उनके निवास-स्थान गाँव खानपुरकलां, जिला सोनीपत में श्री राजहंस जी मैत्रेय, बहादुरगढ़ ने शान्तियज्ञ करवाया। इस अवसर पर उपस्थित पारिवारिक जनों, इष्टमित्रों, रिश्तेदारों तथा हजारों ग्रामवासियों ने तीन-तीन आहुतियां डालकर दिवंगत की आत्मा की शान्ति के लिए परमपिता परमात्मा से प्रार्थना की।

दोपहर बाद श्रद्धांजलि सभा का आयोजन किया गया। इस सभा के मुख्य वक्ता स्वामी राजदेव, सरदार जरनैलसिंह, राजहंस जी मैत्रेय तथा प्रो० ओमकुमार जी उपप्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा रोहतक थे। सभी वक्ताओं ने माताजी के द्वारा बताये मार्ग पर चलने की प्रेरणा दी। मैत्रेय जी ने आत्मा की अमरता, कर्मयोग की महिमा, जीवन और मृत्यु आदि विषयों पर अपने विचार रखते हुए श्रद्धा-सुमन अर्पित किये। माताजी के पुत्र-पौत्रादि को सम्बोधित करते हुए कहा कि माताजी के द्वारा दर्शाये मार्ग पर ही परिवार को आगे बढ़ाना। उन्होंने वैद्य जगन्नाथ जी आर्य के दीर्घायु, स्वस्थ व नीरोग रहने तथा परिवार की कुशलता एवं मंगलता की भी प्रार्थना की।

अंत में प्रो० ओमकुमार जी ने अपनी संवेदना, सहानुभूति प्रकट करते हुए श्रद्धांजलि दी। उन्होंने कहा कि माताजी धार्मिक संस्कार व विचारों से ओतप्रोत थीं। शरीर और आत्मा के बारे में जानकारी देते हुए प्रो० साहब ने कहा कि जन्म और मृत्यु अटल सत्य हैं।

इसके बाद वैद्य जगन्नाथ जी ने आगन्तुक विद्वानों को यथाशक्ति दान-दक्षिणा प्रदान की। इस सभा में उपस्थित सभी का धन्यवाद किया। माता जी की आत्मा की शान्ति के साथ ही विश्वशान्ति की कामना करते हुए शान्तिपाठ किया गया तथा सभा विसर्जित की गई।

श्रद्धांजलि सभा के बाद पारिवारिक परम्परा के अनुसार सभी भाइयों में बड़े डॉ० वेदप्रकाश को पगड़ी बांधी गई। इस प्रकार इस पगड़ी रस्म के द्वारा परिवार की संपूर्ण जिम्मेवारी डॉ० वेदप्रकाश को सौंप दी।

**—देवप्रकाश आर्य, खानपुर कलां, जिला सोनीपत**


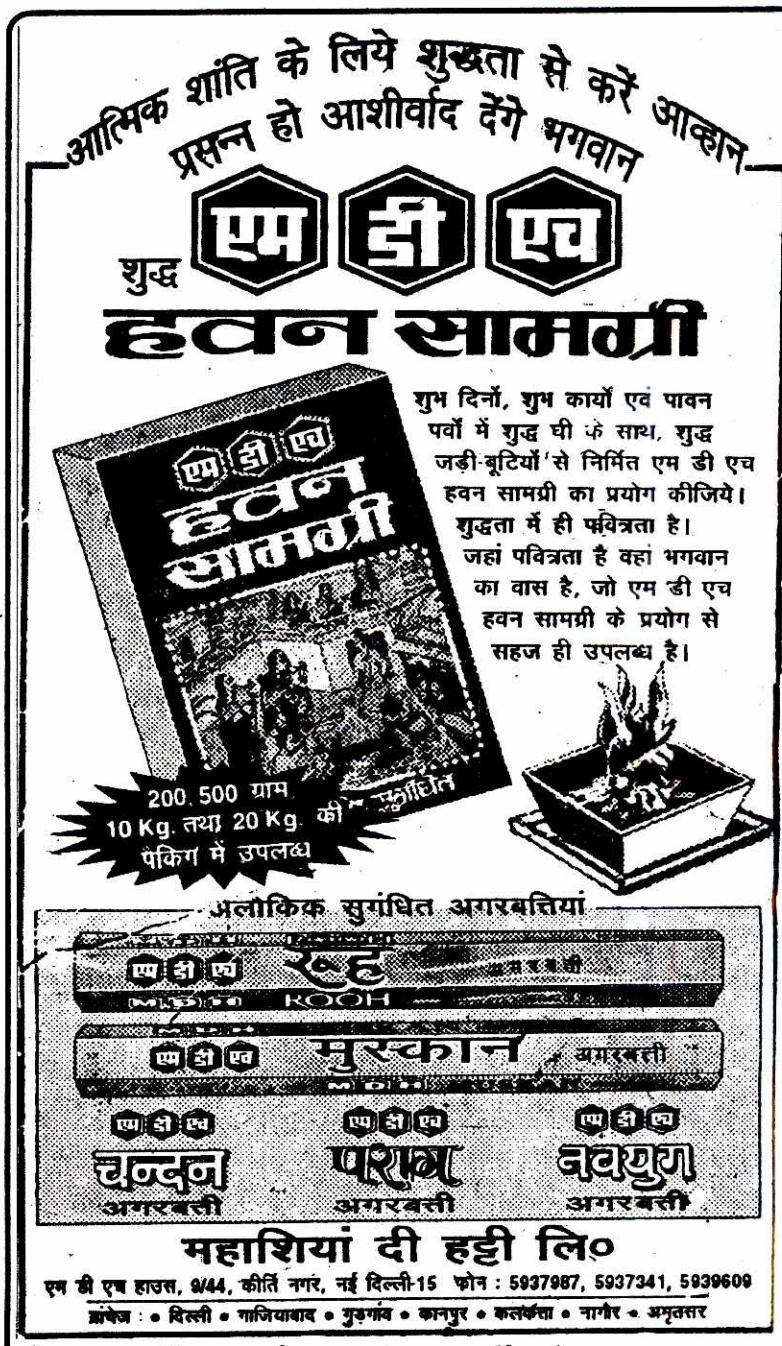


**मै० कुलवन्त पिक्कल स्टोर,** शाप नं० 115, मार्किट नं० 1, एन.आई.टी., फरीदाबाद-121001 (हरि०)
**मै० मेवाराम हंसराज,** किराना मर्चेन्ट, रेलवे रोड, रिवाड़ी-123401 (हरि०)
**मै० मोहनसिंह अवतारसिंह,** पुरानी मण्डी, करनाल-132001 (हरि०)
**मै० ओम्प्रकाश सुरिन्द्र कुमार,** गुड़ मण्डी, पानीपत-132103 (हरि०)
**मै० परमानन्द साईं दित्तामल,** रेलवे रोड, रोहतक-124001 (हरि०)
**मै० राजाराम रिक्खीराम,** पुरानी अनाज मण्डी, कैथल-132027 (हरि०)

www.thearyasamaj.org



# आर्य-संसार

दीपावली पर विशेष...

## जीवन की संभावना, कभी न हो अवरुद्ध। एक दीप करता सदा, अन्धकार से युद्ध॥

❑ कृष्ण वोहरा, सेवानिवृत्त प्रिंसिपल, 641, जेल ग्राउण्ड, सिरसा

प्रसिद्ध कवि अशोक अंजुम द्वारा रचित ये पंक्तियां दीपावली के सन्देश को सार्थक करती हैं। मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम ने महा अभिमानी लंकानरेश रावण तथा उसके कुटुम्ब को धराशायी करके यह सिद्ध कर दिया कि चाहे कितनी काली अन्धेरी रात हो, प्रात:काल का अमृतमयी उजियारा अवश्य होता है। दीपक के प्रकाश से अन्धेरा समाप्त हो जाता है। चाहे तामसिक वृत्तियाँ कितनी उथल-पुथल मचायें लेकिन अन्त में विजय सात्त्विक शक्तियों की होती है।

कार्तिक मास में आने वाला दीपावली पर्व अन्धकार पर प्रकाश, असत्य पर सत्य एवं अधर्म पर धर्म की विजय का सन्देश देने वाला है। हिन्दू मान्यता के अनुसार दीपावली के दिन मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम अपने चौदह वर्ष के वनवास के बाद अयोध्या लौटे थे तब उनके स्वागत में अयोध्यावासियों ने घी के दिए जलाये थे-तब से लेकर आज तक घर-घर में दीपक जलाये जाते हैं।

**ज्योति पर्व ने दोस्तो,**
**रखे इस तरह पांव।**
**झिलमिल-झिलमिल कर उठे,**
**गली मुहल्ले गाँव।**

समूचे भारतवर्ष में तथा विदेशों में भी दीपावली का त्यौहार मनाया जाता है। प्रत्येक घर में परिवार के सभी सदस्य धन, वैभव व समृद्धि की देवी लक्ष्मी की पूजा करते हैं। सभी कामना करते हैं कि उनके घर-परिवार में कभी दारिद्र्य एवं दु:खरूपी अन्धकार न आए। दीपक के प्रकाश के समान सभी हँसते मुस्कुराते रहें।

**दीपों की फिर एकता, देखो लाई रंग।**
**अन्धकार मारा फिरे, दीपक जीते जंग॥**

महापर्व दीपावली के आगमन से बहुत दिन पहले लोग अपने-अपने घरों, दुकानों, और व्यावसायिक प्रतिष्ठानों को साफ-सुथरा करके सुन्दर बना लेते हैं। दुकानें नई-नवेली दुल्हन की तरह सज उठती है, दीपावली के दिन बाजारों की रौनक देखते ही बनती है। मिठाइयों की दुकानों पर भारी भीड़ गरीब एवं अमीर अपनी-अपनी हैसियत के अनुसार सभी खरीदते हैं। रात होते ही चारों ओर पटाखों का शोर गूंजने लगता है। छोटे-छोटे बच्चे, किशोर, नवयुवक, नवयुवतियां, वृद्ध सभी देर रात तक आतिशबाजी चलाकर आनन्द एवं हर्ष में झूम रहे होते हैं। ऐसा लगता है जैसे आज कहीं अन्धकार नहीं, उदासी नहीं, निराशा नहीं। चारों ओर जीवन में नया विश्वास, नई उमंग, नई आशा।

**ज्योति-पर्व वन्दन करे,**
**शत-शत करे प्रणाम।**
**अंधियारों की साजिशें,**
**तुमने की नाकाम॥**

दीपावली के दिन मित्रों, सगे-सम्बन्धियों एवं पड़ोसियों में एक-दूसरे को शुभ-कामनाएँ दी जाती है। मिठाइयों का आदान-प्रदान किया जाता है। इस प्रकार यह पर्व सारे समाज में भाईचारे, शान्ति, प्रेम व एकता की स्थापना करने का पावन पर्व है। रात के समय करोड़ों रुपये की आतिशबाजी जलाकर नष्ट कर दी जाती है। इस पर नियन्त्रण करना आवश्यक है। इसी प्रकार कुछ लोग रात के समय जुआ-सट्टा खेलकर लक्ष्मी देवी का अनादर करते हैं। इस कार्य पर कानूनी शिकंजा करना आवश्यक है।

दीपावली पर्व पर ही आर्यसमाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द सरस्वती को निर्वाण प्राप्त हुआ।

**इन्हें कोटि-कोटि नमन।**
**दीपावली की आप सबको**
**शुभकामनाएँ।**

प्रसिद्ध कवि अशोक अंजुम के शब्दों में—

**ज्योति पर्व पर दोस्तो,**
**ले संकल्प विशेष।**
**जैसे अंधियारा मिटा,**
**मिटे हृदय से द्वेष॥**
**राम तुम्हारी वापसी को,**
**तरसें ये नैन।**
**गली-गली रावण उगे,**
**है जन-जन बेचैन॥**

# सामवेद पारायण यज्ञ सम्पन्न

16-18 अक्तूबर 2013 को न्यू पालम विहार गुड़गाँव में सामवेद पारायण यज्ञ सम्पन्न हुआ। आर्यजगत् के वैदिक विद्वान् आचार्य वेदमित्र जी वैदिक योग आश्रम भऊ आर्यपुर रोहतक के ब्रह्मत्व में यज्ञ हुआ। कार्यक्रम में अनेक स्थानों के यज्ञप्रेमी सम्मिलित हुए। आचार्य जी की श्रद्धामयी तथा वैज्ञानिक विवेचना तथा युवाओं को ब्रह्मचर्य की प्रेरणा से भरने वाली ओजस्वी वाणी से युवाओं ने यज्ञोपवीत लिये। यज्ञ-योग को विश्व अपनाने का वर्णन वेदों के माहात्म्य को प्रकट कर रहा है। न्यू पालम विहार आर्यसमाज के मुख्य कार्यकर्त्ता श्री राजेश आर्य व उनके छोटे भाई भूपेन्द्र द्वारा यह कार्यक्रम किया गया कार्यक्रम के समापन पर आचार्य जी ने नये भवन का उद्घाटन किया। यजमान ने घर में नित्य यज्ञ करने का व्रत लिया।

इसी प्रकार झज्जर पोलीटेकनिक में बृहद् यज्ञ व उपदेश का कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। आचार्य जी के ब्रह्मत्व में अनेक युवा छात्रों ने जनेऊ धारण कर नित्य यज्ञ-योग करने का संकल्प लिया।

**—राहुल आर्य, पातञ्जल योगाश्रम, भऊ आर्यपुर (रोहतक)**

## महर्षि दयानन्द जन्म स्थान टंकारा में बोधोत्सव का आयोजन

आर्यजनों को यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता होगी कि प्रतिवर्ष की भांति आगामी वर्ष में महर्षि दयानन्द जन्म स्थान टंकारा में शिवरात्रि के पावन पर्व पर भव्य ऋषि बोधोत्सव का आयोजन बुधवार, वीरवार, शुक्रवार, 26, 27, 28 फरवरी 2014 को किया जायेगा। आपसे निवेदन है कि आप यह तिथियाँ अभी से अंकित कर लेवें और इन तिथियों में अपनी आर्यसमाज एवं अपनी संस्था का कोई कार्यक्रम न रखकर उक्त समारोह में अधिक से अधिक आर्यजनों के साथ टंकारा पधारने का कार्यक्रम बनायें। आपके आवास एवं भोजन की व्यवस्था टंकारा ट्रस्ट की ओर से होगी।

**—रामनाथ सहगल, मन्त्री**

## ईश्वर आज्ञापालन के बिना सुख.... प्रथम पृष्ठ का शेष....

आभास होता है कि वायु है। इसी प्रकार ईश्वर निराकार है वैसे दिखाई कैसे देगा, वह सबके अन्दर विराजमान है, पवित्र आत्मा को ईश्वर का होने का आभास होता है।

मनुष्यों को ऐसा जानना चाहिये कि परमेश्वर को छोड़कर और कोई हमारी रक्षा करने वा सब सुख साधनों का देने वाला कोई नहीं है, क्योंकि ईश्वर के अतिरिक्त अन्य किसी में यह सामर्थ्य नहीं है, ईश्वर अपनी सामर्थ्य से सब जगह परिपूर्ण हो रहा है।

यह निश्चय करके जानें कि जो इस संसार में धन है सो सब ईश्वर का है। मनुष्य लोग परमेश्वर की जैसी प्रार्थना करें वैसा ही पुरुषार्थ भी करना चाहिये, क्योंकि बिना पुरुषार्थ के कुछ भी उपलब्धि नहीं हो सकती। जैसे विद्या आदि धन वाला परमेश्वर है, ऐसा विशेषण ईश्वर का कह वा सुनकर कोई मनुष्य कृतकृत्य अर्थात् विद्या आदि धन वाला नहीं हो सकता, किन्तु अपने पुरुषार्थ से विद्या आदि धन की वृद्धि वा रक्षा निरन्तर करनी चाहिए जैसे परमेश्वर अविद्यादि रोगों को दूर करने वाला है, वैसे मनुष्यों को भी उचित है कि आप भी अविद्या आदि रोगों को दूर करें। जैसे वह वस्तुओं को यथावत् जानता है वैसे मनुष्यों को भी उचित है कि अपने सामर्थ्य के अनुसार सब पदार्थ विद्याओं को यथावत् जानें जैसे वह सबकी पुष्टि को बढ़ाता है, वैसे मनुष्य भी सब पुष्टि आदि गुणों को निरन्तर बढ़ावें। जैसे वह अच्छे-अच्छे कार्यों को बनाने में शीघ्रता करता है, वैसे मनुष्य भी उत्तम-उत्तम कार्यों को त्वरा से करें और जैसे हम लोग उस परमेश्वर की उत्तम कर्मों के लिये प्रार्थना निरन्तर करते हैं, वैसे परमेश्वर भी हम सब मनुष्यों को उत्तम पुरुषार्थ से उत्तम-उत्तम गुण वा कर्मों के आचरण के साथ निरन्तर संयुक्त करता है।

ईश्वर का सभी मनुष्यों को उपदेश है कि सदा उत्तम-उत्तम काम करना और बुरे-बुरे काम छोड़ना तथा किसी के साथ द्रोह वा दुष्टों का संग भी न करना और धर्म की रक्षा, पुरुषार्थ वा परमेश्वर की उपासना स्तुति और प्रार्थना निरन्तर करते रहना चाहिये। जो ईश्वर आज्ञा का पालन करता है, सदैव पुरुषार्थ और धर्माचरण से सब कार्य क रता है, वह ईश्वर आज्ञा का पालन करने वाला सदैव धन, धान्य का स्वामी व सुखों को भोगता है।

www.thearyasamaj.org



# अल्पज्ञ

काफी लम्बे समय से विचारतंत्री उलझी हुई है—कर्मफल की मीमांसा में। अनेक पृष्ठ रंग डाले हैं, अपने विचारों को अभिव्यक्ति देने में, पर कुछ बना नहीं और जब मस्तिष्क में कुछ स्रोत खुलता हुआ दिखाई देने लगा तो जीवात्मा की अल्पज्ञता की ओर मन केन्द्रित होने लगा। अत: पहिले अल्पज्ञता पर ही विचार कर लें। जीवात्मा अल्पज्ञ है, यह विद्वानों से वर्षों से सुनते आ रहे हैं। सुनना, समझना थोड़े ही होता है। फिर समझने के बाद हृदयंगम करना, आत्मसात् करना और बात है।

केवल परमात्मा सर्वज्ञ है तो उसके विपरीत चेतनप्राणी तो जीवात्मा ही है, फिर वह तो अल्पज्ञ ही हुआ। दो सर्वज्ञ नहीं हो सकते। जीवात्मा की हठधर्मी तो देखिए वह अपने को अल्पज्ञ मानने को तैयार नहीं।

हिन्दी के शब्दकोष में अल्पज्ञ की विभक्ति 'अल्प' और 'ज्ञ' दी है। 'अल्प' माने थोड़ा 'ज्ञ' माने जानने वाला अल्पज्ञ माने थोड़ा जानने वाला या नासमझ। जीवात्मा अल्पज्ञ है, इसके प्रमाण में हजारों उदाहरण दिये जा सकते हैं। रात्रि में प्रगाढ़ निद्रावस्था में मुझे क्या मालूम कि सुबह देखूँगा भी या नहीं। संत कह गये हैं—नौ द्वारे का पिंजरा, तामें पंछी मौन। रहे अचम्भा जानिए, गए अचम्भा कौन?

जीवात्मा की अल्पज्ञता का प्रश्न गहरा गया। दूधिए लालू जी को यदि 'अल्पज्ञता' का एहसास होता तो वह कभी 950 करोड़ के चारे घोटाले में नहीं फंसते। पन्द्रह वर्षों तक सम्पूर्ण ऐश्वर्य, राजसी ठाट भोगने के पश्चात् जेल। न एयरकण्डीशन कमरा न सुखदायी गाव-गद्दे, कठोर जमीन और दो कम्बल। एक ओढ़ने को और एक बिछाने को। और जैसे-जैसे काली कमाई का पता चलता जायेगा, वैसे-वैसे शासन उस पर कब्जा करता जाएगा। डाकू वाल्मीकि को तो संत मिल गये थे। जिन्होंने उसके 'ज्ञ' को झकझोर दिया। संतों ने कहा—जा, घर जा। परिवार में पूछ ले कि जो चोरी डकैती का पाप कर्म करके उनके लिये धन अर्जित कर रहा है, उस पाप में वह भागी हैं अथवा नहीं? सभी ने अस्वीकार कर दिया। कह दिया—हमारे भरण-पोषण का दायित्व तुम्हारा है। इसे तुम पाप से करते हो या पुण्य से। इससे हमें कुछ लेना देना नहीं। कर्मफल तुम्हें ही भोगना होगा। वाल्मीकि की आँखें खुल गई। संतों को उसने परिवार का कहा सुना दिया और उन्हें बंधन से मुक्त कर दिया।

लालू जी के साथ ऐसा नहीं हुआ। पूरा परिवार, पत्नी जिसे उन्होंने डमी मुख्यमंत्री तक बनवा दिया था, उनको सावधान, सचेत नहीं कर पाई। यह तो हुआ नहीं, बल्कि उस आनन्द को आकण्ठ डूबी रहीं। राँची की बिरसा मुण्डा जेल में लालू जी अकेले ही गए। सम्पूर्ण नाते-रिश्तेदार से, पार्टी कार्यकर्त्ताओं से वियुक्त होकर। क्या इसकी कल्पना उन्होंने चारा घोटाला में लिप्त होने पर की थी? क्या यह जीवात्मा की अल्पज्ञता का प्रमाण नहीं है और लीजिये, एक दिन में जीवात्मा की अल्पज्ञता के दो प्रमाण मिल गए। 'संत' आसाराम 'बापू' स्वघोषित कृष्णावतार 2000 युवतियों से रति-सुख उठाने के पश्चात्, नहीं, नहीं उन्हें मोक्ष सुख दिलाने के पश्चात् नपुंसक, त्रिनाड़ी शूल और पीडोफीलिया से ग्रसित बताये जाने के बाद भी अभी तक जमानत भी नहीं पा सके। यहाँ नपुंसक, त्रिनाड़ी शूल और पीडोफीलिया की थोड़ी चर्चा की जावे। बापू नपुंसक हैं, 16 वर्षीय नाबालिग लड़की से बलात्कार नहीं कर सकते, डॉक्टरी जांच में यह दावा झूठा सिद्ध हुआ। त्रिनाड़ी शूल उपचार नारी वैद्य ही कर सकती है और वह भी परित्यक्ता उनकी शिष्या बताया गया। आयुर्वेद में त्रिनाड़ी शूल कोई बीमारी नहीं है। पीडोफीलिया से ग्रसित व्यक्ति किशोर बालकों से कामवासना तृप्ति चाहता है, करता है यानी 'बापू' आसाराम को लगभग प्रतिदिन सैक्स की तृप्ति चाहे हूरें हों या गिलमान चाहिए—चाहे उसके लिए अफीम, स्वर्णभस्म और हीराभस्म का सेवन ही क्यों न करना पड़े। नपुंसक, त्रिनाड़ी शूल और पीडोफीलिया से ग्रसित बताये जाने के बाद भी अभी तक जमानत भी नहीं पा सके। कारागार की सख्त जमीन पर वह भी दो कम्पलों में पड़े हैं। वैभव की पराकाष्ठा देखिये, पूरे विश्व में 450 आश्रम। लाखों भक्त, लाखों भक्तों की भक्ति देखिये कि वह पूर्णतया आश्वस्त हैं कि 'बापू' निर्दोष हैं और उन्हें षड्यंत्र पूर्वक फँसाया गया है और प्रताड़ित किया जा रहा है। उनकी मुक्ति के लिये जप-जाप चल रहे हैं। प्रदर्शन हुए हैं, जेल के बाहर भी और अन्यत्र भी। व्यक्तिगत अल्पज्ञता और सामूहिक अल्पज्ञता का बेजोड़ उदाहरण मिल गया।

अब आइए, सम्भोग से समाधि तक ले जाने वाले 'भगवान्' रजनीश अपना झण्डा गाड़ने अमेरिका-यू.एस.ए. गये थे। उन्हें क्या मालूम था कि अमरीका पहले ही सम्भोग से समाधि या चिर-समाधि की और अग्रसर है। जेल जाना पड़ा। भक्तों ने प्रधानमत्री राजीव जी से अनुरोध किया तब ही मुक्त हो आकर भारत लौटे फिर पतन गाथा शुरू हुई। यह भी अल्पज्ञ सिद्ध हुए।

प्रखर बुद्धि के धनी मध्यप्रदेश शासन में सर्वोच्च पदों पर आसीन पति-पत्नी युगल अरविन्द जोशी और टीनू जोशी, जो दोनों ही आई.ए.एस. हैं, 42 करोड़ की आय से अधिक संपत्ति के मामले में फँसे पड़े हैं, धन-वैभव व शासकीय पद की गरिमा से मण्डित अब समस्त प्रतिष्ठा गंवाकर धूल-धूसरित हो रहे हैं।

उपर्युक्त उदाहरणों में से दो, लालू जी और जोशी दम्पति में आत्मा के बताये गये छै: महाबली शत्रुओं में से केवल लोभ के शिकार हुए और बाकी दो 'सन्त' आसाराम और 'भगवान्' रजनीश काम और मोक्ष के। इस सूची में मेरी जानकारी के अनुसार उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश और हरियाणा के पुलिस महानिरीक्षक महोदय भी आते हैं। थोड़े से प्रयत्न से और जानकारी भी जुटाई जा सकती है।

ये सब उदाहरण भारत के हैं जिन्हें जीवात्मा की अल्पज्ञता का ज्ञान हजारों वर्ष की सांस्कृतिक विरासत में मिला है। जरा, देखिये तो सही—

1. 'सामान सौ बरस का, पल की खबर नहीं'।

2. 'सब ठाठ धरा रह जाएगा, जब हंसा जाएगा उड़'।

3. मुंज के भेजे गए हत्यारों ने मासूम भोज की हत्या नहीं की उसे बता दिया कि चाचा मुंज ने राज्य के लोभ से उसकी हत्या करने के लिए जंगल में भेजा है। भोज ने कहा कि चाचा को मेरी मृत्यु का समाचार देने से पहिले मेरा संदेश दे देना। भोज ने एक श्लोक लिख भेजा जिसका हिन्दी अनुवाद है—सतयुग का प्रतापी राजा मान्धाता मर गया। समुद्र पर सेतु बाँधने और रावण को मारने वाला राम भी आज कहाँ है? युधिष्ठिर आदि राजा भी स्वर्ग को चले गये। किसी के साथ यह राज्य, यह भूमि नहीं गई। निश्चय ही यह तेरे साथ अवश्य जाएगी। इस श्लोक को पढ़कर मुंज के ज्ञानचक्षु खुल गए।

4. ईशोपनिषद् के प्रथम मंत्र में ही कहा गया है कि संसार का समस्त वैभव तेरे लिये है, इसका जमकर भोग कर पर यह सोचकर कि सब उस परमात्मा का है—**'तेन त्यक्तेन भुंजीथा।'** तेरे साथ कुछ नहीं जाएगा।

5. युधिष्ठिर और यक्ष के संवाद का एक प्रश्न—संसार का सबसे विचित्र बात क्या है? और युधिष्ठिर का उत्तर—संसार की सबसे विचित्र बात यह है कि मनुष्य मृत्यु को रोज देखता है और सोचता है कि यह मरेगा, वह मरेगा पर मैं नहीं। जीवात्मा अल्पज्ञ ही सिद्ध हुआ न।

मनुष्य की बुद्धि को, विवेक को सदैव जाग्रत रखने का एक ही उपाय है—परमात्मा की शरण और मांगना गायत्री मंत्र के अनुकूल हे परमात्मा! हमारी बुद्धि को कल्याणकारी मार्ग पर ले चल क्योंकि हमारे काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सर में फँसने के पूरे-पूरे चांसेज हैं। हम फँसेंगे ही, क्यों जीवात्मा बना ही इन गुणों से है। प्रयत्न और वैराग्य की राह पर चलने वाली बिरला ही पुण्यात्मा होती हैं। मैं अपनी भड़ास निकाल रहा हूँ। मैं स्वयं जीवन भर इनसे मुक्त नहीं हो सका। कितना कीचड़ लपेटा है, इसे मैं या मेरा परमात्मा जानता है, पत्नी भी नहीं। सूरदास के शब्दों में कहना चाहूँगा—'अब लौं नसानी, अब ना नसैहों।'

**—अभिमन्यु कुमार खुल्लर, 22 नगर निगम क्वार्टर्स, जीवाजीगंज, लश्कर, ग्वालियर-474001 (म०प्र०)**
**फोन० 0751-2426931**

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा के स्वामित्व में मुद्रक, प्रकाशक व सम्पादक **सत्यवीर शास्त्री** ने आचार्य प्रिंटिंग प्रेस, दयानन्दमठ, रोहतक से मुद्रित एवं कार्यालय, सिद्धान्ती भवन, दयानन्दमठ, रोहतक-124001 से प्रकाशित। पत्र में प्रकाशित लेखसामग्री से मुद्रक, प्रकाशक, सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं।
प्रत्येक विवाद के लिए न्यायक्षेत्र रोहतक न्यायालय होगा। आपत्ति की अवधि प्रकाशन तिथि से एक माह के भीतर ही मानी जाएगी।